

## बल गंगाधर तिलक के राजनीतिक विचार के अंतर्गत अंग्रेजी शासन के प्रति उनका दृष्टिकोण

लोकमान्य का व्यक्तित्व और संपूर्ण जीवन संघर्ष की एक संगठित कहानी है। इतिहास ने उन्हें जो प्रेरणा दी उस प्रेरणा से वशीभूत होकर उन्होंने नए इतिहास की रचना की थी। सी वाई चिंतामणि जो तिलक के आलोचक थे उन्होंने भी यह स्वीकार किया कि स्वाधीनता का उत्कट प्रेम उनके जीवन का स्थाई भाव था। यह सही है कि उनके लिए स्वराज धर्म था, स्वराज्य उनके लिए जीवन था। उनके अपने ही एक लेख के अनुसार स्वराज के बिना हमारा जीवन और हमारा धर्म व्यर्थ है। एक तरफ तिलक का यह दृष्टिकोण था और दूसरी तरफ ब्रिटिश शासन की निरंकुशता थी। लोकमान्य यह पूरी तरह से जानते थे कि स्वराज की मांग ही ब्रिटिश सरकार को अप्रसन्न करने वाली है। स्वराज्य को प्राप्त करने के लिए जो उपाय किए जाएंगे। उनसे अंग्रेजों का अप्रसन्न होना स्वभाविक था। अध्यापन के कार्य से मुक्त होने के बाद केसरी और मराठा में जिन विचारों का प्रतिपादन किया उनसे ब्रिटिश शासन नाराज हुआ उन पर दो बार राजदोह का मुकदमा चला और उन्हें कारावास का दंड भी भोगना पड़ा।

बंगाल विभाजन के बाद देश में स्वदेशी और बहिष्कार आंदोलन का आरंभ हुआ उसके लिए तिलक का सक्रिय कार्य सदैव स्मरण रहेगा। स्वदेशी आंदोलन के लिए उन्होंने गणपति महोत्सव का उपयोग किया। बहिष्कार के लिए नागरिकों को तैयार किया। स्पष्ट रूप से वह सरकार के किसी भी कार्य का समर्थन नहीं कर सकते थे जो भारत के हितों के विरुद्ध हो। उनकी यह स्पष्ट धारणा थी कि भारत के हित और ब्रिटिश शासन के हित एक-दूसरे के विरोधी हैं। यही कारण था कि ब्रिटिश शासन के प्रति उनका दृष्टिकोण उदार नहीं था। उदारवादी नेताओं का अंग्रेजों की न्यायप्रियता में पूरा विश्वास था। लेकिन तिलक को उनकी न्यायप्रियता में भला कैसे विश्वास होता उन्हें तो उस शासन में सदैव संदेह में चेतावनी और जेल की सजा ही दी थी। अंग्रेज उनसे इतनी शत्रुता रखते थे कि उन्होंने हिंसात्मक कार्रवाई में फंसाने की बार बार कोशिश की राजनीतिक अपराधों पर की जाने वाली कार्रवाई के सुझाव को सिरे से तैयार करने वाली समिति ने भी उन पर अनुचित व अनावश्यक आक्षेप किए। तिलक की प्रतिष्ठा और छात्रता पर सामान्यतः पूरा प्रभाव डालने वाले तथा शिरोत्तम केस में उठाई गई बातों पर हानिप्रद ढंग से अच्छे करने वाले निष्कर्ष निकाले। अंग्रेजों की न्यायप्रियता, निष्पक्षता था उदारता ने उनकी किंचित्मात्र भी आस्था नहीं थी। युद्ध के समय उन्होंने ब्रिटिश सामाज्य के अस्तित्व को बचाने के लिए जो सहायता की घोषणा की थी। वह उनके आपदग्रस्त धर्म में सहायता के सिद्धांत के अनुकूल ही थी।

प्रथम विश्व युद्ध में जर्मनी की विजय और मित्र राष्ट्रों की प्रारंभिक पराजय ने भारत के सभी लोगों को सोचने का अवसर दिया। तिलक आपदग्रस्त धर्म के सही बात को समझते थे। फलता उन्होंने विपति में पड़े शत्रु की सहायता करने के सिद्धांत का परिपालन किया संकट में फंसे हुए शत्रु को भी परेशान नहीं करना चाहिए। कुछ इस भावना से प्रेरित होकर और कुछ यह सोच कर कि यदि इस समय हम अंग्रेजों की सहायता करेंगे तो अंग्रेज कृतज्ञ होकर हमें हमारे उचित राजनीतिक अधिकार छोड़ देंगे। उन्होंने केसरी के माध्यम से अंग्रेजों को सहायता दिए जाने को सिद्धांत रूप में स्वीकार कर लिया युद्ध काल में अंग्रेज भारत के संबंध में उदारता पूर्व घोषणा करते रहे।

होमरुल आंदोलन के समय में 20 अगस्त सन 1917 को भारत मंत्री मिनिस्टर मांटेग्यू ने ब्रिटिश संसद में यह घोषणा की थी कि "नवीन शासन सुधारों के संदर्भ में भारत वासियों से मिलकर बातचीत करने के लिए मैं स्वयं भारत जाऊंगा।" इस घोषणा से उदारवादियों को बेहद खुशी हुई मॉटेग्यू ने ब्रिटिश संसद में भारत को उदारवादी शासन देने की घोषणा की थी। इस घोषणा के बाद 9 नवंबर सन 1917 को भारत आए। तिलक होमरुल लीग के शिष्टमंडल के साथ आए उनसे मिले। जितना स्पष्ट उत्तर तिलक ने दिया उसका विवरण इस प्रकार से है:- "मिस्टर

मॉटेंग्यू ने मुझे एक सीधा प्रश्न किया, क्या भारत के लोग उसे स्वीकार कर लेंगे जो हम देंगे या वे उसे लेने से इंकार कर देंगे, मैंने उत्तर दिया इंग्लैंड का जनतंत्र भारतवासियों को जो कुछ देगा उसे हम स्वीकार कर लेंगे और जो कुछ नहीं दिया गया उनके लिए कशमकश जारी रखेंगे।“ इस पर मिस्टर मॉटेंग्यू ने कहा आप पहले व्यक्ति हैं जिसने मेरे इस प्रश्न का उत्तर इतना शीघ्रता और निश्चितात्म रूप में दिया। तिलक ने यह विवरण इस भैंट के बाद अपने मित्र को दिया। इस भैंट से तिलक और माउंटेन क परस्पर एक दूसरे से प्रभावित हुए। तिलक ने वैसे मांटेंग्यू की घोषणा को **सर्यहीन उषा** की संज्ञा दी थी। सन 1917 के इस मिलन के बाद युद्ध समाप्ति पर था तब सन 1919 के अधिनियम की रचना हुई मॉटेंग्यू चेम्सफोर्ड सुधारों के प्रति अमृतसर अधिवेशन में सुलह के रूप में प्रस्ताव पास किया। तिलक केई आशावादिता पर पानी फिर गया। देश को रॉलेट एक्ट मिला। गांधीजी के असहयोग को उन्होंने अपना आशीर्वाद दिया था। लेकिन उन में भाग लेने से पूर्व भी उनकी जीवनदीप बुझ गयी। तिलक के संपूर्ण जीवन में राजनीति व्यवहार का आधार भगवतगीता का यह वाक्य था कि, ये यथा मां प्रपद्यते तास्तथैव भाज्यमहं, इसका अर्थ है जो लोग मेरे पास जी भावना से आते हैं मैं उनके साथ वैसा ही व्यवहार करता हूं। तिलक के प्रति अंग्रेजी शासन कभी भी उदार नहीं रहा, फिर भला तिलक से यह कैसा आशा की जा सकती थी कि वे विनम्र बने रहे। उनका लक्ष्य स्वराज था जो ब्रिटिश शासन को अप्रिय था उन्होंने अंतिम सांस तक स्वराज के ही गीत गाए।